International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
Volume-8, Issue-6 Nov-Dec- 2021
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org
Email- editor@ijesrr.org

# "दयानन्द भाष्य के आलोक में ऋभु देवता"

**अर्चना भार्गव**

**सह–आचार्य, संस्कृत**

**स.पू.चौ.राज. महाविद्यालय,**

**अजमेर**

ऋग्वेद में देवताओं का स्वरूप समझने के लिए दयानन्द सरस्वती के सत्यार्थ–प्रकाश के प्रथम अध्याय का अध्ययन अनिवार्य है। दयानन्द सरस्वती ने आधुनिक युग में ऋग्वेद का भाष्य प्रस्तुत कर यह सिद्ध किया है कि ऋग्वेद के पदों का यौगिक अर्थ है, रूढ़ नहीं। इस प्रकार उन्होंने देवताओं के पदों का जो निर्वचन–जन्य अर्थ किया है वह निम्न प्रकार से है :–

इन्द्र = √इदि ऐश्वर्य से – सूर्य, राजा, परमात्मा, शक्तिशाली।

मित्र = √मिद् से – सूर्य, मित्र रूप परमात्मा।

वरूण = √वृ से – आकाश, महान् सर्वोत्तम परामात्मा।

अग्नि = √अञ्जु से – आग, सर्वव्यापक।

इसी निर्वचन पद्धति के अनुसार उन्होंने **"ऋभु" पद का निर्वचन कहीं विद्वज्जन किया है, कहीं किरण और कहीं क्रिया कुशल मेधावी जन।** स्वामीजी ने ऋभु पद के निर्वचन के लिए निम्न यास्कीय निर्वचनों को अपनाया है –

(1) उरू+√भा से

(2) ऋत +√भा से

(3) ऋत +√भू से

इन निर्वचनों के आधार पर यास्क–प्रदर्शित अर्थों की धारा में दयानन्द भाष्य में निम्न चार प्रमुख अर्थ मिलते हैं –

(1) "मेधावी" अर्थ से दयानन्द से बुद्धिमान पितृजन[1], बुद्धिमान पितृ आचार्यजन[2], क्रियाओं में कुशल मेधावी[3], अनेक विधाओं का प्रकाशक विद्वान्[4], धीर–बुद्धि, आयुर्दाऔर सभ्यता का प्रकाशक मेधावी[5], प्रशस्त विद्वान्[6], आप्त विद्वान्[7] तथा सम्पूर्ण विद्याओं से उत्पन्न हुई बुद्धिवाला मेधावी[8]।

(2) किरण।[9]

(3) धनञ्जय सूत्रात्मा वायु के समान।[10]

(4) महान्।[11]

दयानन्द सरस्वती द्वारा स्वीकृत ऋभु पद के यास्कीय निर्वचनों में दो उपपद स्वीकार किये गये हैं – एक उरू तथा दूसरा ऋत। "ऋभु" पद की धातुओं में स्वामी जी ने √भा (चमकना) तथा √भू (होना) दो धातुओं को स्वीकार किया है। "ऋतु" पद में √ऋ धातु है जो अनेकार्थक है। इन दोनों उपपदों तथा धातुओं की सहायता से "मेधावी" अर्थ ज्ञानार्थक √ऋ धातु से निष्पन्न है। "किरण" तथा "वायु" अर्थ मत्यर्थक √ऋ धातु से लिए गये हैं। ऋभु पद का "महान्" अर्थ √ऋ गतिप्रापणयोः से लिया गया है। ऋभु पद में आगत "भकार" का मूल स्वामी जी ने √भा तथा √भू धातुओं को माना है जिससे ऋभुओं की प्रकृष्ठ सत्ता को स्वीकार करते हुए उन्हें दीप्त्यर्थक स्वीकार किया है। इस प्रकार यास्क की भाँति ही दयानन्द ने भी केवल √ऋ से निर्वचन न कर √भू और √भा की भी सहायता लेते हुए "ऋभु" पद का निर्वचन किया है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने भाष्य में ऋभुओं के विविध कृत्यों अथवा चमत्कारों के भिन्न अर्थ प्रस्तुत किये हैं। ऋभुओं के स्वरूप पर प्रकाश डालने वाली कतिपय मुख्य ऋचाओं का यहाँ उल्लेख किया जा रहा है :–

**उत त्यं चमसं नवं त्वष्टुर्देवस्य निष्कृतम्।**
**अकर्त चतुरः पुनः।**[12]

प्रस्तुत ऋचा में "उत त्यं चमसं नवम्" के भाष्य में स्वामी जी लिखते हैं कि शिल्पी अर्थात् कारीगर का सिद्ध तथा नवीन कर्म देखकर जब विद्वान लोग भू, जल, अग्नि तथा वायु से सिद्ध होने वाले शिल्प–कर्मों को करते हैं तो आनन्द से विभोर हो जाते हैं। इस अर्थ में दयानन्द सरस्वती ऋभुओं को देव–शिल्पी ही स्वीकार कर रहे हैं तथा विद्वान् को भी वे शिल्पी ही मानते हैं। उनकी इस मान्यता का कारण सम्भवतः यह है कि विद्वान् भी एक अर्थ में शिल्पी होता है क्योंकि वह अर्थ के अनुसार शब्दों की कतर–व्यौंत करके उन्हें नया–नया रूप देता रहता है।

**"शच्याकर्त पितरा युवाना शच्याकर्त चमसं देवपानम्।**
**शच्या हरी धनुतरावतष्टेन्द्रवाहावृभवो वाजरत्नाः।।"**[13]

अर्थात् अन्न और सुवर्ण आदि पदार्थों की निधि रूप हे बुद्धिमानों! आप अपनी उत्तम बुद्धि से विज्ञान वाले युवा अध्यापक तथा उपदेशक की संरचना कीजिये। कर्म के द्वारा दिव्य विद्वान् जन जिस साधन से आनन्द–रस का पान करते हैं उस साधन का निर्माण कीजिये। वाणी के माध्यम से शीघ्र गति कराने वाले तथा ऐश्वर्य को उपलब्ध कराने वाले वायु और विद्युत (रूपी अश्वों) को उत्पन्न कीजिये।

प्रस्तुत भाष्य में दयानन्द सरस्वती ने माता–पिता का अर्थ विज्ञान बुद्धि वाले अध्यापक तथा उपदेशक लिया है जबकि अन्य कई वेद–भाष्यों में इसकी अर्थ द्युलोक और पृथिवी लोक मिलता है। "देवपानम्"

अर्थात् सोमपान–चमस द्वारा सोमपान से अभिप्राय यह प्रतीत होता है कि साहित्य, कला, संगीत आदि की साधना से जो एक अद्भुत आनन्द उत्पन्न होता है, उस आनन्द–रस का पान ही यहाँ "देवों द्वारा सोमपान" है तथा वायु और बिजली दो अश्व हैं जो अभीष्ट सिद्धि तक तुरन्त पहुँचाते हैं। अतः ऋभुओं द्वारा दो अश्वों का निर्माण वायु तथा विद्युत् का निर्माण ही है।

**"एकं वि चक्र चमसं चतुर्वयं निश्चर्मणो गामरिणीत धीतिभिः।**
**अथा देवेष्वमृतत्वमानश श्रुष्टी वाजा ऋभवस्तद् व उक्थ्यम्।।[14]"**

प्रस्तुत ऋचा में "चर्मणो गामरिणीत धीतिभिः" का दयानन्द ने "अपने कर्मों से मानवीय भूमि को प्राप्त किया" अर्थ लिया है। इसके अनन्तर विद्वानों में वे (ऋभुगण) अमर हो गये। स्वामी जी के द्वारा प्रदत्त "एकं वि चक्र चमसं चतुर्वयम्" का अर्थ अस्पष्ट है। सम्भवतः उनका अभिप्राय है कि उन्होंने अकेले ही एक प्रकार के मेघ को चार प्रकार का बना दिया।

शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि "चर्म वाऽएतत् कृष्णस्य (मृगस्य) तन्मानुषं, शर्म देवत्रा"।[15] प्रस्तुत ब्राह्मण–निर्वचन के अनुसार चर्म का अर्थ भारतीय मानव है। जिस भारत देश में कृष्ण मृग का रूप यज्ञ ने धारण कर लिया था, उसी देश के मानव को यहाँ "चर्मणः" कहा गया है। अभिप्राय हो जायेगा कि अपने अद्भुत कर्मों के द्वारा भारतीय मानवों की भूमि को प्राप्त कीजिये। प्राचीन इतिहास में भारत भूमि स्वर्गतुलय मानी गयी है, इसीलिये पुराणों में कहा गया है – "गायन्ति देवाः किल गीतानि, धन्यास्तु ते भारतभूमि भागा।"

**"रथं ये चकुः सुवृतं सुचेतासोऽविह्वरनतं मनसस्परि ध्यया।**
**ताँ ऊ न्वस्य सवनस्य पीतय आ वो वाजा ऋभवो वेदयामसि।।"[16]**

ऋग्वेद की प्रस्तुत ऋचा के अर्थ में दयानन्द सरस्वती की मान्यता है कि हस्तकौशल को प्राप्त बुद्धिमान मनुष्य ही "वाजा ऋभवः" हैं जो विमान को सब प्रकार से परिपूर्ण रूप में बनाते हैं तथा इस ज्ञान को उनसे प्राप्त कर हम दूसरों को सिखाते हैं। इस अर्थ के अनुयार ऋभु यन्त्र–रयचिता इन्जीनियर के रूप में सामने आते हैं जो भारत के मानवों को वैज्ञानिक सुख–सुविधा प्रदान करते हैं।

**"तक्षन् नासत्याभ्यां परिज्मानं सुखं रथम्।**
**तक्षन् धेनुं सबर्दुथाम्।।"[17]**

इस ऋचा में इस विमान संरचना के उपादान–कारण भी बताये गये हैं कि अग्नि और जल में तक्षण क्रिया के द्वारा वे मन्त्रों की रचना करते हैं तथा इसी सूक्ष्म लक्षण विधि से उन्होंने सभी प्रकार के सुखों को देने वाली वाणी को अर्थात् सबर्दुघा धेनु को रचा। यहाँ दयानन्द सरस्वती ने किसी भौतिक संरचना की निष्पात्ति न मानकर वाणी रूपी धेनु की सूक्ष्म संरचना माना है।

**"ये अश्विना ये पितरा य ऊती धेनुं ततक्षुर्ऋभवो ये अश्वा।**

**वे अंसत्रा य ऋधग्रोदसी ये विभ्वो नरः स्वपत्यानि चक्रुः।।"**[18]

प्रस्तुत ऋचा में "धेनुं ततक्षुः" का अर्थ जहाँ अन्य भाष्यकारों ने "गाय को दुधारू बनाया" किया है, वहाँ दयानन्द सरस्वती ने "धेनु अर्थात् वाणी को सूक्ष्म तथा विस्तृत प्रभाव वाली बनाया" अर्थ किया है। "विभवः नरः" का अर्थ उन्होंने सम्पूर्ण विद्याओं में व्यापक मनुष्य लिया है जिससे यह सिद्ध होता है कि ऋभुओं में व्यापकत्व गुण तो है ही, वह किसी मानवीय क्रिया में भी हो सकता है तथा अन्तरिक्षीय पदार्थों में भी हो सकता है।

**"युवाना पितरा पुनः सत्यमन्त्रा ऋजूयवः।**
**ऋभवो विष्ट्यक्रत।।"**[19]

ऋग्वेद की प्रस्तुत ऋचा का अर्थ सायण आदि ने जहाँ "अपने माता–पिता को युवा बनाया" लिया है वहाँ स्वामी जी ने "मेल–अमेल स्वभाव वाले अग्नि और जल को पुनः पुनः प्रयोग में लाते हैं" अर्थ किया है।

ऋग्वेद की निम्नलिखित ऋचा में ऋभुओं के लिए एक रहस्यपूर्ण बात कही गई है–

**"द्वादश द्यून् यदगोह्यस्यातिथ्ये रणन्नृभवः ससन्तः।**
**सुक्षेत्राकृण्वन्ननयन्त सिन्धून् धन्वातिष्ठन्नोषधीर्निम्यमायः।।"**[20]

अर्थात् जग ये ऋभु अगोह्य अर्थात् प्रत्यक्ष सूर्य के गृह में आर्द्रा से लेकर वृष्टिकारक बारह नक्षत्रों तक अतिथि रूप में सुखपूर्वक निवास करते हैं तब वे वृष्टि द्वारा खेती को निष्पन्न करते हैं तथा नदियाँ बहाते हैं, किन्तु दयानन्द सरस्वती इससे नितान्त भिन्न अर्थ देते हैं कि आलस्य रूपी तन्द्रा से जागने वाले बुद्धिमान् मनुष्य बिना किसी छिपाव–दुराव के अतिथि–सत्कार में बारह दिन तक उपदेश देवें। यहाँ ऐसी प्रतीति होती है कि नितान्त स्पष्ट अभिप्राय वाली ऋचा को भी दयानन्द सरस्वती ने दुरूह बना दिया है तथा इसके मूल में उनकी पारम्परिक प्रवाह को उलट देने की भावना ही दृष्टिगोचर होती है।

इसी भाँति यज्ञ में पुरोहित–कर्म से अमरत्व–प्राप्ति तथा एक वर्ष में सहचर बनना[21] का अर्थ दयानन्द सरस्वती ने प्रबल उत्तम ज्ञानवान् और मधुर वाणी वाले मरणशील बुद्धिमानों का निरन्तर पुरुषार्थ–युक्त कामों को प्रत्येक क्षण करके मोक्षभाव को प्राप्त करना किया है। ऋभुओं का चर्म से गौर को निर्माण, उसकी बछड़े से योजना और माता–पिता को युवा बनाना से दयानन्द का अभिप्राय बुद्धिमानों द्वारा गायों को पुष्ट करना, उनकों बछड़ों से संयुक्त कर प्रसन्न रखना तथा दीर्घजीवी माता–पिता को सुन्दर सेवा एवं सुख व स्वास्थ्यप्रद साधनों से युवकों के सदृश भावना या उत्साह वाला बनाये रखना है।[22]

दयानन्द सरस्वती के भाष्य के आलोक में "ऋभु" पद में कौशल तथा ऋत से दीप्तिमत्ता का भाव निहित है। ऋत के कारण ही ये जाज्वल्यमान हैं। ऋत के अनेक अर्थ हैं – सत्य, अग्नि, परमेष्ठी, मन,

ब्रह्म, स्वर्ग, यज्ञ, ताप, शाश्वत नियम आदि। अतः जो व्यक्ति सत्य–आचरण वाला है, सत्य विद्या युक्त है, अग्रणी है, ज्ञानवान्, तपस्वी, धन–सम्पन्न तथा कुशल शिल्पी है वह ऋभु है।

वस्तुतः दयानन्द सरस्वती ने ऋभुओं से सम्बन्धिता ऋचाओं के जो अर्थ प्रस्तुत किये हैं वे युग–सापेक्ष हैं। समाज–सुधारक होने के नाते उनका प्रमुख दायित्व था – समाज में ज्ञान, कला, साहित्य आदि का प्रकाश फैलाने वाले मधावी जनों को प्रेरित करना। अतः उन्हें "ऋभु" पद का अर्थ बुद्धिमान्, मेधावी और ज्ञानी जन करना पड़ा। यदि उनके भाष्य के भाव को गहराई से पहचानने का प्रयास किया जाये तो उनका मूल–भाव भी प्रस्तुत लघु–शोध–प्रबन्ध में अपेक्षित भाव का पोषक हे अर्थात् ऋभु अन्तरिक्षीय वायु के मध्य विद्यमान रहने वाला वह तत्त्व है जो लक्षण और विकर्तन द्वारा पदार्थों तथा वाणी में एक विराट् विविधता उत्पन्न करता है, इसीलिए स्वामी जी ने यत्र–तत्र ऋभु का अर्थ कुशल कारीगर आदि किया है।

दयानन्द सरस्वती के ऋग्वेद के हिन्दी भाषा के दुरूह और अनधिगम्य होने के कारण यह सम्भावना अवश्यंभावी है कि स्वामी जी द्वारा प्रदत्त अभिप्राय को हिन्दी–भाष्यकार समझ नहीं सके अथवा उसे सही ढंग से अभिव्यक्त नहीं कर सके। अतएव दयानन्द सरस्वती के हिन्दी भाष्य का पुनरूदार होने पर ही उनके द्वारा प्रदत्त ऋभु सम्बन्धी भावों को अधिक पूर्णता से समझा जा सकता है।

**संदर्भ :**

1. ऋग्वेद, 4.33.4
2. ऋग्वेद, 4.33.4
3. ऋग्वेद, 1.111.1
4. ऋग्वेद, 1.110.7
5. ऋग्वेद, 1.110.7
6. ऋग्वेद, 1.111.5
7. ऋग्वेद, 7.48.2
8. ऋग्वेद, 1.121.2
9. ऋग्वेद, 1.110.6
10. ऋग्वेद, 1.161.6
11. ऋग्वेद, 3.5.6
12. ऋग्वेद, 1.20.6
13. ऋग्वेद, 4.35.5
14. ऋग्वेद, 4.36.4

15. शतपथ–ब्राह्मण, 3.2.1.8
16. ऋग्वेद, 4.36.2
17. ऋग्वेद, 1.20.3
18. ऋग्वेद, 4.34.9
19. ऋग्वेद, 1.20.4
20. ऋग्वेद, 4.33.7
21. ऋग्वेद, 1.110.4
22. ऋग्वेद, 1.110.8